जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

चित्त कोई जमीन नहीं; जिसे बल से, वैभव से, पुण्यप्रताप से जीत लिया जाये। चित्त को जीत लेनेवालों को छहखण्डों की नहीं अखण्ड आत्मा की प्राप्ति होती है।

ह्न आप कुछ भी कहो, पृष्ठ : 32

वर्ष : 27, अंक : 24 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मार्च (द्वितीय)2005 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

'भारतीय दर्शनों में अहिंसा' विषय पर संगोष्ठी सानन्द सम्पन्न

जयपुर (राज.) : जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर तथा त्रिलोक उच्चस्तरीय अध्ययन अनुसंधान संस्थान, कोटा के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 21 से 23 फरवरी, 2005 तक **भारतीय दर्शनों में अहिंसा** विषय पर त्रिदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

21 फरवरी को राज. विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में प्रथम सत्र की अध्यक्षता श्री महावीर राज गैलडा, लाडनूँ ने की। मुख्य अतिथि प्रो. एस. आर. व्यास, नई दिल्ली तथा विशिष्ट अतिथि श्री दौलत डागा व डॉ. टी.सी. कोठारी, नई दिल्ली थे। मुख्य वक्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर एवं डॉ. दयानन्द भार्गव, जोधपुर थे। विषय का प्रवर्तन डॉ. पी.सी. जैन ने किया।

इस अवसर पर डॉ. भारिल्ल ने अपने मार्मिक उद्बोधन कहा कि जैनदर्शन में तो अहिंसा को बहुत ही व्यापकरूप से परिभाषित किया गया है। यहाँ बाहरी हिंसा के त्याग की ही नहीं; अपितु रागादि भावोंरूप अंतरंग हिंसा के त्याग की उत्कृष्ट चर्चा की गई है। साथ ही डॉ. दयानन्दजी भार्गव व डॉ. टी.सी. कोठारी ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

उद्घाटन सत्र के पश्चात् संगोष्ठी में आये हुये सभी विद्वानों को पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा सत्साहित्य भेंटकर सम्मानित किया गया।

श्री कुन्दकुन्द भवन भट्टारकजी की नसियाँ में द्वितीय सत्र की अध्यक्षता डॉ. भारिल्ल ने की।

22 फरवरी को प्रथम सत्र की अध्यक्षता पण्डित प्रभुदयालजी कासलीवाल एवं द्वितीय सत्र की अध्यक्षता पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने की।

समापन समारोह की अध्यक्षता प्रो. सत्यदेव मिश्र कुलपती राज. संस्कृत वि.वि. ने की।

अन्त में डॉ.पी.सी. जैन ने संगोष्ठी का प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुये बताया कि संगोष्ठी में डॉ. राजारामजी आरा, डॉ. भागचन्दजी भागेन्दु दमोह, डॉ. धर्मचन्दजी जैन कुरुक्षेत्र, डॉ. प्रेमसुमनजी जैन, डॉ. श्रीयांसजी सिंघई आदि 122 विद्वानों ने 7 सत्रों में 109 पत्र पढे तथा सर्वसम्मती से शेष 13 पत्र पढ़े गये मान लिये गये।

इस अवसर पर अहिंसा ग्राम स्वराज और समग्र क्रांति यज्ञ के पुरोधा श्री सिद्धराजजी ढड्डा का प्रशस्तिपत्र आदि द्वारा सम्मान किया गया।

ह्न डॉ. पी. सी. जैन

शिलान्यास समारोह सानन्द सम्पन्न

इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ श्री दि. जैन कुन्दकुन्द कहान स्वाध्याय भवन का शिलान्यास समारोह दिनांक 26-27 फरवरी, 2005 को सम्पन्न हुआ।

दिनांक 26 फरवरी को सम्मेदशिखर विधान का आयोजन किया गया, पश्चात् पण्डित धनसिंहजी पिड़ावा के प्रवचन का लाभ मिला। दिनांक 27 फरवरी को 51 महिलाओं द्वारा कलश शोभायात्रा के पश्चात् श्री कनकबेन अनंतराय अमोलकचन्द सेठ मुम्बई एवं श्री मुकेश जैन सुपुत्र श्री राजेश जैन स्व. श्रीमती सन्तोषबेन देवलाली के करकमलों से शिलान्यास विधि सम्पन्न हुई।

इस अवसर पर स्थानीय विद्वान दिलीपजी बाकलीवाल, पण्डित क्रांतिकुमारजी पाटनी, पण्डित तेजकुमारजी गंगवाल, पण्डित रमेशजी बांझल, पण्डित शशिकान्त जैन आदि विद्वानों का सान्निध्य प्राप्त हुआ। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद ने सम्पन्न कराये। सभी कार्यक्रम पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा के निर्देशन में सम्पन्न हुये।

इस अवसर पर श्रीमती श्रीकान्ताबेन पूनमचन्दजी छाबड़ा द्वारा **ऐसे क्या पाप किये** पुस्तक की प्रतियाँ सभी को वितरित की गई।

प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा संचालित अपभ्रंश साहित्य अकादमी द्वारा 'पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' प्रारंभ किया जा रहा है। यह सत्र 1 जुलाई, 2005 से प्रारंभ होगा। इसमें प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं/विषयों के प्राध्यापक अपभ्रंश, प्राकृत शोधार्थी एवं संस्थानों में कार्यरत विद्वान सम्मिलित हो सकेंगे। नियमावली एवं आवेदन पत्र दिनांक 25 मार्च से 15 अप्रैल, 2005 तक अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-302004 से प्राप्त करें। कार्यालय में आवेदन पत्र पहुँचने की अंतिम तिथि 15 मई 2005 है।

ह्न डॉ. कमलचन्द सोगाणी

अब प्रातः 6.35 पर ...

साधना चैनल पर प्रतिदिन प्रसारित हो रहे डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों का समय अब प्रातः 6.45 के बजाय 6.35 बजे हो गया है। अतः समस्त साधर्मीजन समय का ध्यान रखते हुये प्रवचनों का लाभ लें।

साधना चैनल आपके यहाँ न आता हो तो श्री पंकज जैन (साधना चैनल) से मोबाइल नं. 09312506419 पर सम्पर्क करें।

सम्पादकीय –

पञ्चास्तिकाय परिशीलन

26

ह्न रतनचन्द भारिल्ल

४० वीं गाथा में कह आये हैं कि चैतन्यानुविधायी ज्ञान-दर्शनरूप उपयोग जीव को अनन्यरूप से सर्वकाल होता है।

अब ४१वीं गाथा में उपयोग के आठ भेदों की चर्चा करते हैं। मूल गाथा इसप्रकार है ह्न

गाथा – ४१

आभिणिसुदोधिमणकेवलाणि णाणाणि पंचभेयाणि।
कुमदिसुदविभंगाणि य तिण्णि वि णाणेहिं संजुत्ते।।

(हरिगीत)

मतिश्रुतावधि अर मनः केवल ज्ञान पाँच प्रकार हैं।
कुमति कुश्रुत विभंग युत अज्ञान तीन प्रकार हैं।।

इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव उपयोग के भेद बताते हुए कहते हैं कि ह्न मति-श्रुत-अवधि-मन:पर्यय और केवलज्ञान ह्न इसप्रकार ज्ञान के पाँच भेद हैं; और कुमति-कुश्रुत तथा विभंगज्ञान ह्न ये तीन विभंग ज्ञान (मिथ्याज्ञान) भी पाँच ज्ञान के साथ संयुक्त किये गये हैं। इसप्रकार ज्ञानोपयोग के आठ भेद हैं।

आचार्य अमृतचन्द्र टीका में स्पष्ट करते हैं कि ह्न यहाँ ज्ञानोपयोग के भेदों के नाम और स्वरूप का कथन है। वहाँ अभिनिबोधिक ज्ञान (मतिज्ञान), श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान और केवलज्ञान तथा कुमति, कुश्रुत और विभंगज्ञान (कुअवधि) ह्न इसप्रकार ज्ञानोपयोग के नामों का कथन है।

उक्त आठों भेदों के स्वरूप का कथन करते हुए टीकाकार आचार्य अमृतचन्द्र कहते हैं कि ह्न ''आत्मा वास्तव में अनन्त (सर्व) आत्मप्रदेशों में व्यापक विशुद्ध ज्ञान सामान्यस्वरूप है। वह सामान्यज्ञानस्वरूप आत्मा अनादि से मतिज्ञानावरण कर्म से आच्छादित प्रदेशवाला होता हुआ प्रवर्तित है। जब मति ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से वह सामान्यज्ञान मतिज्ञान के रूप में प्रगट होता है, तब मन और पाँच इन्द्रियों के अवलम्बन से किंचित् मूर्तिक/अमूर्तिक द्रव्य को परोक्षरूप जानता है, उस ज्ञानविशेष का नाम अभिनिबोधिकज्ञान या मतिज्ञान है।

वही आत्मज्ञान श्रुत ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से मन के अवलम्बन द्वारा वस्तु को परोक्ष (विकल) रूप से जानता है, उसे श्रुतज्ञान कहते हैं।

उसप्रकार के आवरण के क्षयोपशम से ही मूर्तद्रव्य का विकलरूप से अवबोधन करना अवधिज्ञान है तथा उसीप्रकार के आवरण के क्षयोपशम से ही परमनोगत मूर्तद्रव्य का विकलरूप से विशेषत: अवबोधन करना मन:पर्यय ज्ञान है।

समस्त आवरण के अत्यन्त क्षय से मूर्त-अमूर्त द्रव्य का सकलरूप से विशेषत: अवबोधन करना स्वाभाविक केवलज्ञान है।

मिथ्यादर्शन के उदय के साथ का अभिनिबोधिक ज्ञान ही कुमति एवं मिथ्यादर्शन के उदय के साथ का श्रुतज्ञान कुश्रुत ज्ञान है। इसीतरह मिथ्यादर्शन के उदय के साथ का अवधिज्ञान कुअवधिज्ञान है।

भावार्थ यह है कि निश्चय से अखण्ड एक विशुद्ध ज्ञानमय आत्मा और व्यवहारनय से संसारावस्था में कर्म आवृत्त आत्मा जब मति, श्रुत, अवधि ज्ञानावरण का क्षयोपशम होने पर पाँच इन्द्रियों और मन से मूर्त-अमूर्त वस्तुओं को विकलरूप से जानता है तो आत्मा का वह ज्ञान क्रमश: मति, श्रुत, अवधि नाम पाता है। वह ज्ञान तीन प्रकार का है ह्न

१. उपलब्धिरूप, २. भावनारूप और ३. उपयोगरूप। मतिज्ञानावरण एवं श्रुतज्ञानावरण के क्षयोपशम से जनित अर्थ ग्रहण शक्ति उपलब्धि है। जाने हुए पदार्थ का पुन: पुन: चिन्तन भावना है और 'यह काला' है, 'यह पीला' है इत्यादि रूप से अर्थ ग्रहण व्यापार उपयोग है।

अवधिज्ञानावरण का क्षयोपशम होने पर मूर्तवस्तु को जो प्रत्यक्षरूप से जानता है, वह अवधिज्ञान है।

अवधिज्ञान में भी लब्धिरूप और उपयोगरूप ह्न ये दो भेद ही होते हैं। अवधिज्ञान देशावधि, परमावधि और सर्वावधि ह्न के भेद से भी तीन प्रकार के होता हैं।

परमावधि और सर्वावधि ह्न चैतन्य के उछलने के भरपूर आनन्दरूप परम सुखामृत के रसास्वादनरूप समरसी भाव से परिणत चरमदेही तपोधनों को होता है।

मन:पर्यय ज्ञानावरण का क्षयोपशम होने पर मनोगत मूर्त वस्तु को जो प्रत्यक्षरूप से जानता है, वह मन:पर्ययज्ञान है। ऋजुमति और विपुलमति रूप इसके दो भेद हैं। विपुलमति पर के मन में स्थित वक्रता को भी जान लेता है, जबकि ऋजुमति मात्र सरल (अवक्र) परिणामों को ही जानता है। ये दोनों ही मन:पर्ययज्ञान आत्मतत्त्व के सम्यक् श्रद्धान-ज्ञान-अनुष्ठान की भावना सहित पन्द्रह प्रमादरहित अप्रमत्त मुनि के विशुद्ध परिणामों में ही उत्पन्न होते हैं। बाद में प्रमत्त गुणस्थान में भी इसका अस्तित्व बना रहता है।

सर्वप्रकार से ज्ञानावरणादि कर्मों का क्षय होने पर जिस ज्ञान के द्वारा समस्त मूर्तिक-अमूर्तिक द्रव्य अपने-अपने गुण-पर्याय सहित प्रत्यक्ष जाने जाय, उस ज्ञान का नाम केवलज्ञान है। इसप्रकार आचार्य अमृतचन्द्र ने इस गाथा में ज्ञान के आठ भेदों का परिचय कराया।

आचार्य जयसेन ने अति संक्षेप में मात्र आठ भेदों के नाम गिनाते हुए मात्र इतना कहा कि ह्न जैसे एक ही सूर्य मेघ के आवरण वश अपनी प्रभा की अपेक्षा अनेकप्रकार के भेदों को प्राप्त हो जाता है, उसीप्रकार निश्चयनय से अखण्ड एक प्रतिभास स्वरूपी आत्मा भी व्यवहारनय की अपेक्षा कर्म समूह से वेष्टित होता हुआ मतिज्ञानादि भेदों द्वारा अनेकप्रकार के भेदों को प्राप्त हो जाता है।

इसी भाव को कविवर हीरानन्दजी ने इसप्रकार व्यक्त किया हैं ह्न

(दोहा)

सुद्ध असुद्ध सुभावकरि, उपयोगी दुय भेद।
तजि असुद्ध पहिली दसा, सुद्ध सुभाव निवेद।।२१७।।
अभिनिबोध-श्रुत-अवधि-मन, परजै-केवलग्यान।
कुमति-कुश्रुत-विभंग है, तीन अग्यान समान।।२१८।।

(शेष पृष्ठ ५ पर.....)

तार : त्रिमूर्ति फोन : 2707458, 2705581, (Fax) 2704127, E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

(श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट मुम्बई द्वारा संचालित)

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

यहाँ पासपोर्ट साइज का नवीनतम फोटो लगावें।

प्रवेश प्रार्थना-पत्र

(नोट : प्रार्थना-पत्र प्रार्थी द्वारा स्वयं भरा जाना चाहिये। सभी पूर्तियाँ सही-सही व पूरी होनी चाहिये।)

कक्षा ..... सत्र .....

नाम छात्र ..... पिता का नाम श्री ..... स्थान .....

आयु ..... जन्म तिथि .....पिता या संरक्षक की आजीविका (व्यापार)..... मासिक आय .....

परिवार में कितने व्यक्ति हैं ? ..... भाई .....बहिन ..... अन्य .....

कभी आपको कोई बड़ी बीमारी हुई हो या अभी हो तो विवरण दें .....

मातृभाषा ..... कोई अन्य भाषा जिसका ज्ञान हों .....

विद्यालय का नाम जहाँ से अन्तिम परीक्षा उत्तीर्ण की है .....

बोर्ड/विश्वविद्यालय का नाम (अन्तिम परीक्षा दी हो).....

अंतिम परीक्षा के लिये हुए विषय 1. ..... 2. ..... 3. .....4. ..... 5..... परिणाम ..... प्रतिशत.....

धार्मिक परीक्षा दी हो तो उसका विवरण दें (प्रमाणपत्र संलग्न करें) .....

मैंने विद्यालय एवं छात्रावास के प्रवेश संबंधी नियमों को पढ़कर समझ लिया है। मैं उनका तथा समय-समय पर संशोधित, परिवर्द्धित, परिवर्तित नियमों व अन्य दी गई सूचनाओं का पूर्ण रीति से पालन करूँगा, यदि इसके विरुद्ध चलूँ या अनुशासन भंग करूँ या संस्था के हित में बाधक समझा जाऊँ या परीक्षा में अनुत्तीर्ण रहूँ तो मुझे संस्था से पृथक् करने तक का दण्ड दिया जा सकता है, वह मुझे बिना आपत्ति किये मान्य होगा। मुझे विद्यालय एवं छात्रावास में प्रवेश दिया जाये।

पत्र-व्यवहार का पूरा पता : ..... हस्ताक्षर छात्र

..... दिनांक .....

पिनकोड ..... फोन नं. (एस.टी.डी. कोड सहित) .....

पिता या संरक्षक द्वारा भरा जाय

1. यह छात्र रिश्ते में मेरा ..... है। 2. मुझे विद्यालय एवं छात्रावास के सम्पूर्ण नियम स्वीकार हैं।

मैं स्वेच्छा से इस छात्र को प्रवेश दिलाना चाहता हूँ तथा प्रमाणित करता हूँ कि छात्र का उपर्युक्त लिखना सही है। यह संस्था के वर्तमान नियमों, समय-समय पर बनने वाले अन्य नियमों, सूचनाओं और अनुशासन का बराबर पालन करेगा तथा विरुद्ध चलने पर अधिकारियों द्वारा दिया हुआ दण्ड मान्य करेगा। छात्र की सभी गतिविधियों के लिए मैं जिम्मेदार रहूँगा।

नाम व पूरा पता : ..... हस्ताक्षर (पिता या संरक्षक)

..... दिनांक .....

छात्र के निवास स्थान के दो प्रतिष्ठित व्यक्तियों का प्रमाणीकरण

हम प्रमाणित करते हैं कि छात्र और उसके पिता या संरक्षक ने जो ऊपर लिखा है वह सही है। छात्र विद्यालय और छात्रावास में प्रविष्ट होने योग्य है।

नाम ..... नाम .....

पता ..... पता .....

....

हस्ताक्षर हस्ताक्षर

दिनांक ..... दिनांक .....

नोट : प्रवेश संबंधी आवश्यक नियम कृपया पीछे देखें। अन्तिम परीक्षा से आशय उस परीक्षा से है जिसके बाद आप विद्यालय में प्रवेश लेना चाहते हैं।

प्रवेश सम्बन्धी आवश्यक नियम

1. विद्यालय एवं छात्रावास में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर (राजस्थान) के जैनदर्शन सहित उपाध्याय पाठ्यक्रम (हायर सैकण्डरी समकक्ष) एवं राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय जयपुर के जैनदर्शन शास्त्री पाठ्यक्रम (तीन वर्षीय स्नातक बी.ए. समकक्ष) में अध्ययन हेतु दिगम्बर जैनधर्म में श्रद्धा रखने वाले छात्रों को प्रवेश दिया जाता है।

2. महाविद्यालय का सत्र जून के अन्तिम सप्ताह से आरम्भ होता है। प्रत्येक वर्ष के लिए नया प्रवेश लेना आवश्यक है। कृपांक (ग्रेस) से उत्तीर्ण छात्रों का प्रवेश नहीं हो सकेगा।

3. प्रवेश प्रार्थना-पत्र 30 अप्रैल तक जयपुर कार्यालय में तथा उसके बाद प्रशिक्षण-शिविर में जमा किये जा सकते हैं।

4. उपाध्याय कक्षा में प्रवेश हेतु सैकण्डरी (10 वीं बोर्ड) या उसके समकक्ष या उच्च परीक्षा पास 18 वर्ष से कम उम्र के छात्र ही प्रवेश पा सकेंगे। सैकण्डरी परीक्षा में सम्पूर्ण विषय (हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, विज्ञान, गणित, सामाजिक विज्ञान) सहित उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

5. प्रवेश हेतु साक्षात्कार के लिए छात्र को पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा आयोजित ग्रीष्मकालीन शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर में पूरे दिन उपस्थित रहकर प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है। **इस वर्ष यह शिविर दिनांक 9 मई से 26 मई, 2006 तक देवलाली (नासिक), महाराष्ट्र में आयोजित होगा।**

6. प्रवेश की स्वीकृति/अस्वीकृति की सूचना छात्र को जून के द्वितीय सप्ताह से पूर्व भेज दी जावेगी। संस्था अस्वीकृति का कारण बताने को बाध्य नहीं है।

7. छात्र को विद्यालय द्वारा निर्दिष्ट दिनचर्या का पालन करना व उपरोक्त पाठ्यक्रम के साथ विद्यालय द्वारा निर्धारित धार्मिक पाठ्यक्रम पढ़ना अनिवार्य है।

8. प्रत्येक छात्र को प्रतिदिन देवदर्शन करने, छना हुआ पानी पीने, रात्रि भोजन त्याग करने, धूम्रपान नहीं करने, पान, तंबाकू-गुटखा तथा लहसुन, प्याज, आलू आदि अभक्ष्य पदार्थ नहीं खाने का नियम रखना होगा। छात्रावास में खाना बनाना, ताश, जुआ खेलना निषिद्ध है।

9. छात्र को सम्बन्धित अधिकारियों द्वारा निर्दिष्ट स्थान पर ही रहना आवश्यक होगा। अपनी इच्छा से स्थान परिवर्तन नहीं किया जा सकेगा, छात्र अपने कमरे में धार्मिक वातावरण रखेंगे, अपने कमरे व उसके आस-पास के स्थान को स्वच्छ रखेंगे व बाथरूम आदि में गंदगी नहीं करेंगे।

10. छात्र अपने अतिथि को पूर्व स्वीकृति प्राप्त करके ही निर्दिष्ट स्थान पर ठहरा सकेंगे।

11. प्रत्येक कमरे में छात्र द्वारा ट्यूब लाईट एवं पंखें के अलावा बिजली का हीटर, सिगड़ी, रेडियो, टेप आदि का प्रयोग करना दण्डनीय अपराध होगा।

12. कोई भी छात्र नकदी या अन्य जोखिम अपने पास नहीं रखेगा, अन्यथा खो जाने पर उसकी स्वयं की ही जिम्मेदारी होगी। नकदी आदि कार्यालय में जमा कराके रसीद प्राप्त कर लेनी चाहिए।

13. किसी भी कारण से छात्रावास से बाहर जाने हेतु संबंधित अधिकारी से अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है। सत्र के बीच में अवकाश पर जाने के लिए प्रार्थना-पत्र देकर तीन दिन पूर्व लिखित स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक है। ग्रीष्मावकाश में कोई भी छात्र बिना अनुमति छात्रावास में नहीं रह सकेगा।

14. धार्मिक अध्ययन से प्रत्यक्ष में उपेक्षा दिखाने वाले, बिना पर्याप्त कारण के परीक्षा में अनुपस्थित रहने वाले या अनुत्तीर्ण रहने वाले, अनुशासन भंग करने वाले छात्रों को बिना किसी पूर्व सूचना के तत्काल छात्रावास से निष्कासित किया जा सकेगा। वार्षिक परीक्षा में पास न होने वालों को सामान्यत: अगले वर्ष छात्रावास में प्रवेश नहीं मिलेगा। इस बारे में विद्यालय एवं छात्रावास अधिकारी का निर्णय ही अंतिम होगा व उसके लिए अपने निर्णय का कारण बताना आवश्यक नहीं होगा।

15. उपरोक्त नियमों के अतिरिक्त समय-समय पर संशोधित, परिवर्द्धित एवं परिवर्तित नियमों का एवं अन्य आदेशों का छात्र को पूर्णरुपेण पालन करना होगा; इसका उल्लंघन करने पर जो दण्ड अधिकारी देंगे वह छात्र को सर्वथा मान्य होगा।

उपर्युक्त नियम हमें पूर्ण मान्य हैं।

हस्ताक्षर छात्र ..... **हस्ताक्षर पिता/संरक्षक .....**

प्रवेश प्रक्रिया

1. प्रवेश प्रार्थना-पत्र छात्र स्वयं भरकर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की सैकण्डरी परीक्षा (10^{th}) अथवा नौवीं की अंकसूची की सत्यापित प्रतिलिपि सहित 30 अपैल तक कार्यालय में भेजें। यदि 10 वीं का परीक्षा परिणाम घोषित नहीं हुआ हो तो नौवीं कक्षा की अंकसूची की प्रतिलिपि ही संलग्न करें।

2. छात्रों को संस्था द्वारा आयोजित शिविर में प्रशिक्षण एवं साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए पूरे दिन उपस्थित रहना आवश्यक है। **इस वर्ष यह शिविर दिनांक 9 मई से 26 मई 2006 तक देवलाली (नासिक)(महा.) में आयोजित होगा।** प्रशिक्षण शिविर के दौरान ही छात्र के परीक्षाफल का प्रतिशत, प्रतिभा, चाल-चलन, धार्मिक रुचि व साक्षात्कार के आधार पर विद्यालय में प्रवेश हेतु छात्र का चयन किया जायेगा।

3. प्रवेश प्राप्ति की सूचना मिलने पर निर्दिष्ट तिथि को जयपुर आना अनिवार्य है।

प्रवेश-स्वीकृति पत्र

छात्र..... पिता श्री ..... को सत्र .....
हेतु कक्षा ..... में प्रवेश स्वीकृत/अस्वीकृत किया जाता है।

दिनांक : **ह. महामंत्री .....** **ह. प्राचार्य .....**

(पंचास्तिकाय परिशीलन, पृष्ठ 2 का शेष...)

(सवैया)

आतमा अनादि ग्यानवान कर्म-छादित है,
इन्द्री मन-द्वार कछू मानै मतिग्यान है।
मनकौं आलंबी सब्द-अर्थरूप श्रुतग्यान,
मूरतीक अनू जानै अवधि बखान है।।
परमनोगत जानै सोई मनपरजै है,
सारै दरव जानै सो केवल प्रमान है।
तीनौं आदि मिथ्या उदै कुग्यान कहावै सुद्ध,
ग्यान कै जगेतैं सारै मोख का निसान है।।२१९।।

(दोहा)

ग्यानावरन समान घन, छादित रविसम ग्यान।
छयोपसम ज्यौं-ज्यौं लहत, त्यौं-त्यौं प्रगटत भान।।२२०।।

उक्त छन्दों का अर्थ अत्यन्त सुबोध है, अत: यहाँ अपेक्षित नहीं है।

इसी ४१ वीं गाथा पर प्रवचन करते हुए ज्ञानोपयोग के आठ नामों का उल्लेख करके गुरुदेवश्री कानजी स्वामी कहते हैं कि ह्न

तत्त्वार्थसूत्र में जो इन्द्रिय और मन के अवलम्बन से मतिज्ञान होता है ह्न ऐसा कहा है वह निमित्त की उपस्थिति बतलाने के लिए कहा है। वस्तुत: यदि इन्द्रियों से ज्ञान होता हो तो पुद्गल और जीव एक हो जाएँ। आत्मा में इन्द्रिय और मन का अभाव है। तेरा मतिज्ञान उपयोग तुझसे होता है, इन्द्रियों से नहीं होता।

इसप्रकार शेष सात ज्ञानों की अपेक्षायें दर्शाई है, जो इस प्रकार है ह्न

श्रुतज्ञान ह्न स्वभाव के आश्रय से चैतन्य के उपयोग का परिणाम श्रुतज्ञान है। यह भी शास्त्र आदि पर के कारण नहीं होता।

प्रश्न ह्न जैसे शब्द पढ़ें वैसा ज्ञान होता है न ?

उत्तर ह्न शब्द और शास्त्र पुद्गलास्तिकाय है। जबकि यह जीवास्तिकाय के ज्ञानगुण के उपयोग का वर्णन है। उपयोग स्व की अस्ति में होता है, पर की अस्ति में नहीं होता। इसलिए शब्द, शास्त्र आदि संयोगों की रुचि छोड़कर, अपने को पर्याय जितना मानना छोड़कर त्रिकाली ज्ञानगुण से भरपूर स्वभाव की रुचि करे, तो धर्म होगा।

अवधिज्ञान ह्न इन्द्रियों और मन के अवलम्बन बिना स्वर्ग-नरकादिरूप पदार्थों को मर्यादितपने से जानने को अवधिज्ञान कहते हैं। रूपी पदार्थ हैं, इसलिए अवधिज्ञान होता है ह्न ऐसा नहीं है; परन्तु त्रिकाली चेतनागुण है ह्न उसकी उपयोगरूप अवस्था अवधिज्ञान की होती है। वह किसी परपदार्थ के कारण नहीं होती।

मन:पर्ययज्ञान ह्न सामनेवाले जीव के रूपी पदार्थ संबंधी चिन्तनन को जान लेना मन:पर्ययज्ञान है। वह अपने अन्तर का व्यापार है।

केवलज्ञान ह्न अपने असंख्यप्रदेशों से समस्त रूपी और अरूपी पदार्थों को एकसाथ, तीनों काल की पर्यायों सहित जानने वाले ज्ञान को केवलज्ञान कहते हैं। वह अन्तर का व्यापार है।

पंचेन्द्रिय मनुष्यपना, मजबूत संहनन अथवा बाहर के काल (चौथे काल) के कारण केवलज्ञान नहीं होता।

अज्ञानी जीव मानते हैं कि देश-देशांतर में पर्यटन करने से, बहुत लोगों से मिलने से, बहुत पुस्तकें अथवा शास्त्र पढ़ने से ज्ञान प्रगट होता है; तो यह सब अज्ञानभाव है। अपने ज्ञान का व्यापार अपने से होता है।

कुमतिज्ञान ह्न आत्मा के ज्ञानस्वभाव से ज्ञान नहीं मानकर राग और निमित्त से ज्ञान मानना कुमतिज्ञान है। कितने ही कहते हैं कि ज्ञानी गुरु मिलने से हमको ज्ञान हुआ; किन्तु यह बात मिथ्या है। कुदेव-कुगुरु के कारण अज्ञान नहीं होता; अपितु स्वयं विपरीतज्ञान करता है तो अज्ञान होता है। यह अपने अस्तिकाय ज्ञान का विपरीत व्यापार है।

कुश्रुतज्ञान ह्न वेदांत पढ़ने से, कामशास्त्र पढ़ने से कुश्रुतज्ञान होता है ह्न यह बात मिथ्या है। जीव स्वयं कुश्रुतज्ञान करता है, वह अपनी अस्ति में अपने से होता है।

विभंगज्ञान ह्न आत्मज्ञान रहित रूपी पदार्थ स्वर्ग-नारकादि को जानने के ज्ञान को विभंगज्ञान कहते हैं। अपने को स्वर्ग-नरकादि का कर्त्ता, राग का कर्त्ता और गुरु की कृपा से ज्ञान माननेवाले विपरीत मान्यता वाले जीव को अमुक रूपी पदार्थ जानने संबंधी ज्ञान को विभंगज्ञान कहते हैं। यह भी स्वयं के कारण है, पर के कारण नहीं।

इसप्रकार ज्ञान की पर्याय अपने अस्तिकाय में अपने से होती है ह्न ऐसा ज्ञान करे तो पर से भिन्न पड़कर जिसमें से ज्ञानपर्याय आती है ह्न ऐसे त्रिकाली चेतना के धारक आत्मस्वभाव के सन्मुख दृष्टि होना धर्म है।

स्वाभाविकभाव से यह आत्मा अपने समस्त प्रदेशव्यापी, अनंत निरावरण, शुद्ध ज्ञानसंयुक्त है। आत्मवस्तु ज्ञान से भरपूर है, राग-द्वेष से नहीं। पैसा, कर्म, शरीररूप होना आत्मा का स्वभाव नहीं है, दया, दानादि विकल्प आत्मा का स्वभाव नहीं है; आत्मा अखण्ड ज्ञानस्वभाव से भरा है। पर्याय में पड़ने वाले भेद जानने योग्य हैं; परन्तु वे भेद अंगीकार करने योग्य नहीं है। मात्र अखण्ड शुद्ध चैतन्यस्वभाव ही अंगीकार करने योग्य है।

संसारी प्राणी अनादि से कर्माधीन होकर हीन और अल्पज्ञ वर्तता है। स्वयं स्वभाव को चूककर कर्म के संग में पड़ा है, इसलिए अपनी हीनदशारूप परिणमित हुआ है। इसकारण सर्वांग-आत्मप्रदेश में ज्ञानावरण कर्म से आच्छादित हुआ है ह्न ऐसा निमित्त अपेक्षा कहा जाता है।

इसप्रकार इस ४१ वीं गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने ज्ञानोपयोग के आठ भेद कहे। फिर आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने आठों की विस्तृत व्याख्या करके सब कुछ स्पष्ट कर दिया। आचार्य जयसेन ने विशेष कुछ नहीं कहा तथा गुरुदेवश्री ने वस्तुस्वातंत्र्य और निमित्त-नैमित्तक संबंधों को स्पष्ट करते हुए कर्मोदय की अपेक्षा का खूब खुलासा करके समझाने का पूर्ण सफल प्रयत्न कर सबकुछ स्पष्ट कर दिया। ●

शिलान्यास महोत्सव सानन्द सम्पन्न

पानकन्हेरगाँव (महा.) : यहाँ नवनिर्माणाधीन श्री कुन्थुनाथ दि. जैन मन्दिर का शिलान्यास महोत्सव दिनांक 28 फरवरी, 2005 को सम्पन्न हुआ। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित श्री अशोकजी मिरकुटे एवं विधानाचार्य पण्डित सुनीलजी बेलोकर, सुलतानपुर के सानिध्य में श्री जयचन्दजी बोरालकर एवं पण्डित अनीलजी बेलोकर द्वारा कराये गये।

शिलान्यास कार्यक्रम श्री विजयकुमारजी राऊत के करकमलों से सम्पन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि के रूप में पं. अशोकजी लुहाड़िया, श्री संतोषजी पाटनी, पं. मनोहरजी मारवड़कर आदि उपस्थित थे। **ह्न अशोक मिरकुटे**

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 24

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ....)

यहाँ द्रव्य-गुण-पर्याय को मिलाकर एक इकाई बनाई गई है।

यह समयसार में वर्णित इकाई नहीं है; जिसमें द्रव्य से पर्याय को भिन्न, गुण को भिन्न एवं गुणभेद को भी भिन्न कहा गया है। यहाँ द्रव्य-गुण-पर्याय को मिलाकर एक इकाई है, जिसे स्वरूपास्तित्व कहा गया है।

हमसे अतिरिक्त जो द्रव्य हैं, उनके साथ हमारी जो एकता की कल्पना है, वह किस आधार पर है, उसमें क्या हेतु है ?

इसमें हेतु मात्र इतना है कि वह भी है और हम भी है; इसप्रकार मात्र अस्तित्व का हेतु है। इसप्रकार मात्र 'है' की रिश्तेदारी है। मेरे और गधे के सींग में कोई संबंध नहीं है; क्योंकि गधे के सींग की न तो अवान्तरसत्ता है और न ही महासत्ता है; क्योंकि वह है ही नहीं और मैं हूँ। इसप्रकार तुम भी हो और मैं भी हूँ ह्न इसप्रकार यहाँ 'है' का संबंध है।

अब आचार्य कह रहे हैं कि जिसने मात्र अस्तित्व संबंध के आधार पर स्वरूपास्तित्व को भूलकर किसी पर से अपनापन स्थापित कर लिया वह मिथ्यादर्शन का धारी मिथ्यादृष्टि है।

समयसार में यह बताया था कि सादृश्यास्तित्व के आधार पर स्वरूपास्तित्व को भूलकर संबंध स्थापित कर लेना मिथ्यात्व है तथा प्रवचनसार में यह बताया जा रहा है कि उससे मिथ्यात्व न हो जाय ह्न इस डर से उस महासत्तावाले तथ्य से इन्कार करना भी मिथ्यादर्शन ही है।

महासत्ता से लेकर अवान्तरसत्ता के मध्य अनन्त सत्ताएँ हैं। 'हम सब एक हैं' ह्न इसमें शुद्धमहासत्ता की अपेक्षा है। इसके पश्चात् 'हम सब मनुष्य हैं' ह्न इसमें भी अशुद्धमहासत्ता की अपेक्षा है।

'हम सब ज्ञानानन्दस्वभावी आत्मा हैं' ह्न यह भी महासत्ता ही है, सादृश्यास्तित्व ही है। अवान्तरसत्ता अपने द्रव्य-गुण-पर्याय के बाहर नहीं निकलती है; जबकि महासत्ता में सबको शामिल किया गया है। इसप्रकार महासत्ता और अवान्तरसत्ता के मध्य लाखों सत्ताएँ हैं।

जिसमें सबकुछ आ जाय वह शुद्धमहासत्ता है और जिसमें सबकुछ तो न आवे; पर बहुतकुछ आ जाय; वह अशुद्धमहासत्ता है। 'हम सब हैं' यह शुद्धमहासत्ता का उदाहरण है और 'हम सब मनुष्य हैं' ह्न यह अशुद्धमहासत्ता का उदाहरण है।

शुद्धसंग्रहनय में शुद्धमहासत्ता की विवक्षा है और अशुद्धसंग्रहनय में अशुद्धमहासत्ता की विवक्षा है। ऋजुसूत्रनय मात्र अवान्तरसत्ता को ग्रहण करता है। व्यवहारनय शुद्धमहासत्ता में तबतक भेद करता है कि जबतक अवान्तरसत्ता तक न पहुँच जावें।

ध्यान रहे यह व्यवहारनय निश्चय-व्यवहारवाला व्यवहारनय नहीं है; यह तो नैगमादि सप्त नयों में आनेवाला व्यवहारनय है।

'हम सब एक हैं' - ऐसा कहा, इसमें 'हैं' के आधार पर शुद्ध महासत्ता है अर्थात् इसमें सब सन्मात्र एक हो गए हैं। फिर 'चेतन' ऐसा भेद किया है, उसमें चेतनता भी महासत्ता का ही भेद है, इसमें अवान्तर सत्ता नहीं है; क्योंकि चेतनता सब जीवों में है; जबकि दो जीवों की अवान्तरसत्ता पृथक्-पृथक् है। मेरी चेतना अलग है एवं आपकी चेतना अलग है; इसप्रकार हम अवान्तरसत्ता तक तो आए नहीं। यह तो मात्र जीवत्व एवं द्रव्यत्व की पहचान है। यहाँ 'स्व' की पहचान नहीं है।

'जीवत्व' यह मेरी पहचान नहीं है। जीवत्व इस लक्षण में अनंत जीव समाहित होते हैं। फिर जीव से अलग होकर 'मनुष्य' पर आए; मनुष्य देवों तथा नारकियों से पृथक् हैं; किन्तु मनुष्य भी २९ अंकप्रमाण हैं। इन सभी को 'मनुष्य' इस महासत्ता में समाहित कर लिया; इसलिए यह शुद्ध नहीं है; यह अशुद्धमहासत्ता है।

वस्तुत: हम महासत्ता से अवान्तरसत्ता अर्थात् सादृश्यास्तित्व से स्वरूपास्तित्व तक आएँ, अपने अस्तित्व तक आएँ; ऐसी स्थिति में जितने भी संबंध स्थापित होंगे, वे सब सदृशता के आधार पर स्थापित होने के कारण महासत्ता के आधार पर ही स्थापित होंगे।

यह सब शुद्धमहासत्ता तथा अशुद्धमहासत्ता के आधार पर ही होता है।

स्वरूपास्तित्व के अतिरिक्त कोई भी हमारा नहीं है। इसे छोड़कर सभी संबंध असद्भूत हैं।

समयसार की शैली में द्रव्य-गुण-पर्याय के सन्दर्भ में स्व के दो भेद किए हैं। जिसके आश्रय से विकल्प उत्पन्न हो ह्न ऐसा स्व एवं जिसके आश्रय से निर्विकल्प की उत्पत्ति हो ह्न ऐसा स्व। स्वभाव के आश्रय से विकल्प की उत्पत्ति नहीं होती, इसलिए वह आश्रय योग्य स्व है और पर्याय के आश्रय से, गुणभेद के आश्रय से विकल्प की उत्पत्ति होती है; इसलिए वह स्व आश्रय करने योग्य नहीं है; इसकारण वह स्व एकप्रकार से पर ही है।

यदि प्रदेशों को और गुणों को अभेदरूप से जाना जाय तो वहाँ विकल्प की उत्पत्ति नहीं होती है; अत: वे स्व वस्तु में समाहित हैं।

इसप्रकार द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अखण्डता दृष्टि का विषय है एवं उसमें अपनापन स्थापित करना सम्यग्दर्शन है। यह समयसार की शैली है।

पर के साथ में हमारा जो महासत्ता संबंधी संबंध है; उससे इन्कार कर देना भी मिथ्यात्व है। इस मिथ्यात्व के छूटे बिना अन्य मिथ्यात्व छूटेगा ही नहीं।

यह भाव का भेद जबतक दृष्टि में उपस्थित रहता है, तबतक विकल्प की उत्पत्ति होती है। इस जीव को वह भाव का भेद दृष्टि में से निकालना है। वस्तु में से उसे बाहर नहीं करना है; क्योंकि वस्तु में से वह कभी बाहर हो ही नहीं सकता है। पर से एकत्व तोड़ना है। इसमें एकत्व को निकालना नहीं है; यह वस्तु में है ही नहीं ह्न ऐसा जानना है।

भक्ष्य पदार्थ दो प्रकार के होते हैं। एक ऐसा भक्ष्य है, जिसे खाना ही नहीं है; इसकारण उसे अभक्ष्य भी कहते हैं एवं दूसरा ऐसा भक्ष्य जो खाने के बाद पेट में चला जाए, उसके बाद कुल्ला करना पड़े। उससे भी यदि मुँह जूठा रहेगा तो जिनवाणी नहीं सुन सकते हैं।

आठ प्रहर के शुद्ध घी का बना हलुआ यदि मुँह में रखे और जिनवाणी पढ़े तो ऐसा नहीं चलेगा। उस वस्तु को मुँह में रखे हुए मंदिर में प्रवेश भी नहीं कर सकते हैं। यह भक्ष्य वस्तु है; इसलिए पेट में रखो तो चलेगा; परन्तु जो माँस-मदिरा आदि हैं; वे पेट में भी रखकर आओ और जिनवाणी पढ़ो

तथा मंदिर में आओ तो नहीं चलेगा; क्योंकि वह व्यक्ति जिनवाणी श्रवण के भी योग्य नहीं है। यदि वह व्यक्ति जिनवाणी सुनेगा तो भी उसे सुनने का कुछ भी लाभ प्राप्त नहीं होगा।

स्वरूपास्तित्व व सादृश्यास्तित्व तथा अतद्भाव व पृथक्त्व ह्न इन दोनों में बहुत अंतर है।

यहाँ पर्यायमूढता की चर्चा मात्र केवलज्ञान व राग तक ही सीमित नहीं है।

संस्कृत के उत्कृष्ट विद्वान अमृतचन्द्राचार्य ने समयसार कलश में इस भाव को इसप्रकार स्पष्ट किया है –

वर्णाद्या वा रागमोहादयो वा भिन्ना भावा: सर्व एवास्य पुंस:।
तैनैवांतस्तत्त्वत: पश्यतोऽमि नो दृष्टा: स्युर्दृष्टमेकं परं स्यात्।।३७।।

(दोहा)

वर्णादिक रागादि सब हैं आतम से भिन्न।
अन्तर्दृष्टि देखिये दिखे एक चैतन्य।।३७।।

यहाँ आचार्य ने यह स्पष्ट कहा है वर्णादि और रागादि भावों से यह भगवान आत्मा भिन्न है।

तब यह कहता है कि शिवभूति मुनिराज को भी केवलज्ञान हुआ था। उन्होंने मात्र 'तुषमाष भिन्नं' जाना था। जैसे तुष भिन्न है और माष भिन्न है ह्न ऐसे ही आत्मा भिन्न है और देह भिन्न है ह्न जब यह जानना हुआ, तब वे आत्मा के अंदर गए और उन्हें केवलज्ञान प्रगट हो गया।

यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होता है शिवभूति मुनि ने राग से भिन्न है ह्न इसप्रकार क्यों नहीं जाना, उन्हें केवलज्ञान से भिन्नत्व का विकल्प क्यों नहीं आया ?

वस्तुत: शिवभूति को केवलज्ञान से एकत्व का विकल्प ही नहीं था। यह धूल तो हमें-तुम्हें साफ करनी पड़ रही है; क्योंकि हम-तुम इस धूल से धूसरित हुए हैं।

होली निकल गई और मुझे साबुन लगाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी। जब मुँह लाल, काले, नीले, पीले रंग से रंगा ही नहीं गया तो फिर उसकी सफाई करने की आवश्यकता ही क्या है ?

इसीप्रकार '**तुषमासंघोषन्तो** वाले मुनिराज ने अधिक गड़बड़ी नहीं की थी; इसलिए उन्हें देह से भिन्न भगवान आत्मा को जानते ही केवलज्ञान हो गया।

अत: प्रवचनसार में जो यह कहा गया है कि उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य से युक्त वस्तु है, गुण-पर्याय से युक्त वस्तु है; वह पूर्णत: सत्य है; परंतु यहाँ मुख्य शर्त अपने स्वरूप के अस्तित्व को छोड़े बिना की है।

स्वरूपास्तित्व की मर्यादा कायम रखकर, स्वरूपास्तित्व को छोड़े बिना ही भाई-भाई का सादृश्यास्तित्व रहता है। यह मेरी पत्नी है, यह मेरी बहन है, यह मेरी मामी है, यह मेरी भाभी है ह्न ऐसा उन्हें छुए बिना ही जितने चाहे संबंध बना लो, पर उँगली लगाई तो यह अपराध माना जाएगा।

सादृश्यास्तित्व के आधार पर पर से एकता का कथन जितना भी है; वह सब इस महासत्ता के आधार पर किया गया कथन है।

दसवाँ प्रवचन

प्रवचनसार परमागम के ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार पर चर्चा चल रही है। पूर्व प्रकरण में यह चर्चा हुई थी कि यह आत्मा मनुष्य, देव, नारकी आदि गतियों रूप असमानजातीयद्रव्यपर्याय में एकत्वबुद्धि के कारण ही परसमय है। सम्पूर्ण पदार्थ द्रव्य-गुण-पर्यायात्मक हैं अर्थात् द्रव्य-गुणात्मक है और द्रव्य और गुणों की पर्यायें होती हैं।

पूर्व प्रकरण में यह चर्चा हो चुकी है कि एक द्रव्य की पर्याय का नाम द्रव्यपर्याय नहीं है; अपितु दो द्रव्यों की मिली हुई पर्याय का नाम द्रव्यपर्याय है।

कुछ लोगों को ऐसी आशंका हो सकती है कि प्रदेशत्वगुण के विकार को व्यंजनपर्याय कहते हैं और व्यंजनपर्याय ही द्रव्यपर्याय है; इसलिए यह कहना कैसे उचित हो सकता है कि यहाँ अनेक द्रव्यों का प्रकरण है।

दूसरी शंका यह हो सकती है कि जब किसी भी तरह की पर्याय में एकत्वबुद्धि करना मिथ्यात्व है; तब यहाँ मनुष्यादि पर्यायों पर वजन क्यों दिया जा रहा है ?

प्रवचनसार की टीका में लिखा है कि 'अनेक द्रव्यात्मक एकता की प्रतिपत्ति की कारणभूत द्रव्यपर्याय है।'

अनेक द्रव्यात्मक एकता अर्थात् अनेक द्रव्यों में जो एकता स्थापित करती है; ऐसी पर्याय का नाम द्रव्यपर्याय है।

गुणपर्याय को भी प्रवचनसार की टीका में निम्नप्रकार से परिभाषित किया है ह्न 'गुण द्वारा आयत की अनेकता की प्रतिपत्ति की कारणभूत गुणपर्याय है।'

यहाँ आयत की अनेकता को गुणपर्याय कहा गया है।

यहाँ परिणमन का प्रकरण नहीं है। यहाँ दो द्रव्यों में एकता स्थापित करने का प्रकरण है। शरीर और आत्मा के प्रदेश और उन दोनों की एकतारूप मनुष्य पर्याय को द्रव्यपर्याय कहते हैं। द्रव्यपर्याय में एकत्वबुद्धि ही भूल है।

'पर्यायमूढ़ परसमय है' ह्न ऐसे प्रकरण के समय हमारा लक्ष्य मात्र गुणपर्याय पर ही जाता है; द्रव्यपर्याय पर हमारा लक्ष्य ही नहीं जाता। हम गुणपर्याय की ही चर्चा करते हैं। हम कहते हैं कि सम्यग्दर्शन गुणपर्याय है एवं उसमें एकत्वबुद्धि मिथ्यात्व है, केवलज्ञान में एकत्वबुद्धि मिथ्यात्व है। यह बात भी उचित हो सकती है; परन्तु यहाँ प्रवचनसार में इस बात पर बल नहीं दे रहे हैं।

यहाँ आचार्य जिस प्रकरण पर अधिक जोर दे रहे हैं, उसे अमृतचन्द्र आचार्य ने ९४ गाथा की टीका में इसप्रकार स्पष्ट किया है ह्न

'जो जीव पुद्गलात्मक असमानजातीय द्रव्यपर्याय का ह्न जो कि सकल अविद्याओं का मूल है; उसका आश्रय करते हुए यथोक्त आत्मस्वभाव की संभावना करने में नपुंसक होने से उसी में बल धारण करते हैं (अर्थात् उन असमानजातीयद्रव्यपर्यायों के प्रति ही बलवान हैं), वे जिनकी निरर्गल एकान्तदृष्टि उछलती है ऐसे ह्न 'यह मैं मनुष्य ही हूँ, मेरा ही यह मनुष्य शरीर है' इसप्रकार 'अहंकार-ममकार से ठगाए जाते हुए, अविचलितचेतना-विलास मात्र आत्मव्यवहार से च्युत होकर, जिसमें समस्त क्रियाकलाप को छाती से लगाया जाता है ऐसे मनुष्य व्यवहार का आश्रय करके रागी-द्वेषी होते हुए द्रव्यरूप कर्म के साथ संगतता के कारण (परद्रव्यरूप कर्म के साथ युक्त हो जाने से) वास्तव में परसमय होते हैं अर्थात् परसमयरूप परिणमित होते हैं।' **(क्रमश:)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

वार्षिकोत्सव सम्पन्न

अशोकनगर (म.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द दि. जैन स्वाध्याय मन्दिर के तत्त्वावधान में श्री महावीर दि. जिनमन्दिर के प्रतिष्ठा महोत्सव के आठवे वार्षिकोत्सव का आयोजन दिनांक 15 से 20 फरवरी, 05 तक किया गया।

इस अवसर पर पण्डित देवेन्द्रकुमारजी अलीगढ़ के प्रात: नियमसार के शुद्धोपयोग अधिकार, दोपहर में समयसार के निर्जरा अधिकार एवं रात्रि में मोक्षमार्गप्रकाशक के सम्यक्त्व सन्मुख मिथ्यादृष्टि विषय पर मार्मिक प्रवचन हुये। इसके अतिरिक्त पण्डित अनिलकुमारजी भिण्ड के भी प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ। प्रात: प्रवचन के पूर्व श्री रत्नत्रय मंडल विधान का आयोजन किया गया। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य विधानाचार्य श्री सुनीलजी धवल भोपाल द्वारा सम्पन्न कराये गये। **ह्न प्रदीप मानोरिया**

पर्यूषण पर्व सम्पन्न

सिवनी (म.प्र.) : यहाँ श्री दि. जैन मुमुक्षु मण्डल स्वाध्याय मन्दिर के तत्त्वावधान में माघ मास के पर्यूषण पर्व दि. 13 से 22 फरवरी, 05 तक सानन्द मनाये गये। इस अवसर पर प्रतिदिन स्थानिय विद्वान पण्डित सुबोधकुमारजी सिंघई एवं पण्डित शिखरचन्दजी जैन के मार्मिक प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ। रात्रि में अनेक कार्यक्रम भी सम्पन्न हुये। **ह्न कु. प्रियंका जैन**

सिद्ध परमेष्ठी विधान सम्पन्न

सिद्धवरकुट (खंडवा-म.प्र.) : यहाँ श्री अमरचन्द बालचन्द जैन परिवार, शाहपुर की ओर से दिनांक 24 फरवरी, 2005 को श्री सिद्ध परमेष्ठी विधान का आयोजन किया गया। इस अवसर पर पण्डित रीतेशकुमारजी शास्त्री, सनावद के दोनों समय प्रवचन का लाभ प्राप्त हुआ। विधानादि के सम्पूर्ण कार्य पण्डितजी द्वारा ही सम्पन्न कराये गये। **ह्न संजय जैन**

परीक्षा सामग्री शीघ्र भेजें

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड ए-4 बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.) की शीतकालीन परीक्षाएँ 28, 29 व 30 जनवरी, 2005 को सम्पन्न हो चुकी है। जिन परीक्षा केन्द्रों ने छात्रों की उत्तर पुस्तिकायें एवं मौखिक परीक्षा की रिपोर्ट अभी तक नहीं भेजी हैं, वे 25 मार्च तक जयपुर-कार्यालय अवश्य भेज दें। **ह्न प्रबन्धक, परीक्षा विभाग**

जैनदर्शन विषय प्रारम्भ

अरथूना (राज.) : बांसवाड़ा जिले के अरथूना ग्राम में राजकीय वरिष्ठ उपाध्याय संस्कृत विद्यालय में दिगम्बर जैन समाज एवं पण्डित ऋषभजी शास्त्री व पण्डित भरतजी शाह के प्रयासों से कनिष्ठ उपाध्याय (कक्षा 11 वीं) में जैनदर्शन विषय प्रारंभ हुआ है। एतदर्थ विद्वतद्वय को हार्दिक बधाई।

ज्ञातव्य है कि राजस्थान में इससे पूर्व एकमात्र गनोडा ग्राम के राजकीय विद्यालय/महाविद्यालय में ही जैनदर्शन का अध्यापन होता था।

वैराग्य समाचार ह्न डॉ. एस. सी. जैन बर्गी-जबलपुर की माताजी श्रीमती सुमतिरानी जैन का देहावसान हो गया है। उनकी स्मृति में 151 - रुपये प्राप्त हुये। दिवंगत आत्मा शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हो यही भावना है। ●

जैनपथप्रदर्शक के स्वामित्व का विवरण

फार्म नं. 4 नियम नं. 8

समाचार पत्र का नाम:		जैनपथप्रदर्शक (हिन्दी)
प्रकाशन स्थान	:	श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर
प्रकाशन अवधि	:	पाक्षिक
मुद्रक	:	श्री प्रमोदकुमार जैन (भारतीय) जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम.आई.रोड, जयपुर
प्रकाशक का नाम	:	ब्र. यशपाल जैन (भारतीय) पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15 (राज.)
सम्पादक का नाम	:	श्री रतनचन्द भारिल्ल (भारतीय) श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15
स्वामित्व	:	पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15

मैं ब्र. यशपाल जैन एतद् द्वारा घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

प्रकाशक :

दिनांक : 1-3-2005

ब्र. यशपाल जैन

ट्रस्टी, पं. टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

प्राप्त दान राशियाँ

1. श्री जगनमलजी कैलाशचन्दजी सेठी के सुपुत्र निशांत सेठी के विवाहोपलक्ष में 251/- रुपये प्राप्त हुये हैं।

2. चि. सौरभ पुत्र श्री सुरेन्द्रजी सौगाणी भोपाल एवं श्रुति जैन अहमदनगर के विवाहोपलक्ष में श्री जितेन्द्र सौगाणी की ओर से 100/- रुपये प्राप्त हुये। एतदर्थ उक्त दोनों दातारों को जैनपथप्रदर्शक समिति की ओर से धन्यवाद ! **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) मार्च (द्वितीय) 2005

J. P. C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.

प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए. जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन तथा इतिहास एवं **पं. जितेन्द्र वि.राठी,** शास्त्री

प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -

ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

फोन : (0141) 2705581, 2707458

तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127